बच्चों और बड़ों की किताब 'पूड़ियों की गठरी'

कमलेश चन्द्र जोशी

हिन्दी बाल साहित्य में अच्छी रचनाएँ कम ही मिल पाती हैं। उसमें भी ऐसी रचनाएँ और कम होंगी जिनमें बच्चों के रोज़मर्रा के जीवन का स्पन्दन हो। इस बात को ध्यान में रखते हुए *नेशनल बुक ट्रस्ट* द्वारा प्रकाशित पुस्तक *पूड़ियों की गठरी* एक ताज़ी हवा के झोंके के समान है। यह किताब मध्य प्रदेश के एक छोटे शहर रीवा के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय की लड़कियों के एक खेल प्रतियोगिता में जाने की तैयारी और उनकी बस यात्रा के अनुभवों पर आधारित है। इस उपन्यास को पढ़ने से साठ-सत्तर के दशक के एक छोटे शहर के जन-जीवन की झलक मिलती है। इस किताब में विद्यालय के शिक्षक, बच्चे व वहाँ के स्टाफ के बीच के आपसी रिश्ते व विद्यालय का जीवन्त माहौल देखने को मिलता है। उपन्यास में विद्यालय की छात्राएँ, शिक्षक, बड़ी बहनजी, सरजू चौकीदार, भगवानदास ड्राइवर

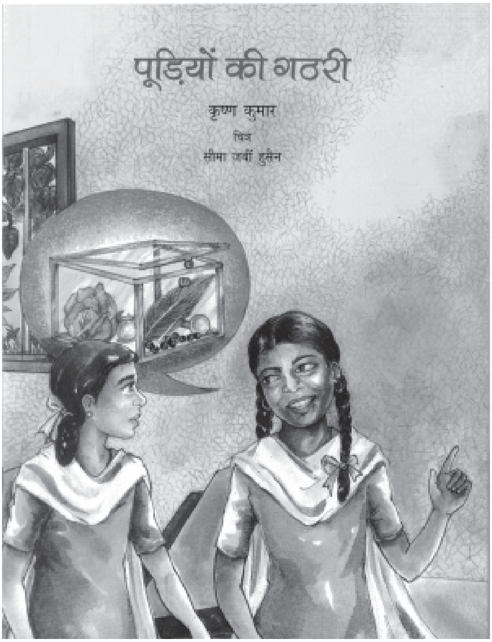

और विद्यालय के कार्यों में सहयोग देने वाली तिजिया आदि शामिल हैं। ये सब मिलकर विद्यालय का जीवन्त चित्र बनाते हैं ।

उपन्यास की पृष्ठभूमि

किताब की शुरुआत विद्यालय की

छात्राओं राधा व पुष्पा की प्रतियोगिता में जाने की बातचीत से शुरू होती है। वे कक्षा में अपनी सहेलियों से बातचीत कर रही होती हैं। दोनों छात्राओं को अपने विद्यालय की एक खटारा बस से निवाड़ी जाना होता है। यह बस चलेगी कि नहीं, वहाँ पहुँचेगी कि नहीं – इसको लेकर दोनों के मन में द्वन्द्व चल रहा है और उनके बीच रोचक बातचीत चलती रहती है। पुष्पा अपनी सहेली राधा से शर्त लगाती है कि बस चलेगी या नहीं। राधा शान्ति-से बोली, "चलने में कौन-सी बड़ी बात है। पुरानी है तो क्या हुआ? है तो बस! क्यों नहीं चलेगी।"

पुष्पा में बस से जाने का जहाँ उत्साह है, वहीं उसके मन में इस बात को लेकर अन्धविश्वास भी है कि बस कहीं टकरा जाएगी और हम सब घायल हो जाएँगे। बस निवाड़ी नहीं पहुँच पाएगी। इसको लेकर उसकी सहेली राधा गुस्सा भी होती है और कहती है, "तू चुप होती है कि नहीं, पुष्पा? मैं अभी बड़ी बहनजी से कहती हूँ। बोल, कहूँ?" इस बात को सुनकर पुष्पा सहम जाती है। इस पृष्ठभूमि में पुष्पा के घर की बातचीत और मान्यताओं का भी असर दिखाई पड़ता है। यह बात राधा को भी पता है। इसके विवरण भी किताब में मौजूद हैं- 'पुष्पा की माँ जब देखो, कोई-न-कोई उपवास कर रही होती हैं और पिताजी अकसर किसी अनिष्ट को टालने की चिन्ता में खोए रहते हैं। अभी पिछले शनिवार उन्होंने एक कटोरे में तेल डालकर कटोरा भिखारी को दे दिया था। पुष्पा ने बताया था कि कटोरा देने से पहले पिताजी ने तेल में अपनी छाया अच्छी तरह देख ली थी। उनका मानना था कि ऐसा करने से कोई दुर्घटना, जिसके होने की सम्भावना थी, अब नहीं होगी'।

कहानी में पुष्पा और राधा की शर्त लग ही जाती है। पुष्पा बस के निवाड़ी पहुँचने पर राधा को अपनी प्रिय चीज़ 'काँच की डिब्बी' देने को तैयार हो जाती है जिसे वह कभी राधा को छूने भी नहीं देती थी। पुष्पा ने काँच की डिब्बी में कई सुन्दर चीज़ें रख छोड़ी हैं - दो मोती, एक सूखा हुआ गुलाब, एक हरा-नीला पंख, काले-लाल गुंचू। इतनी सुन्दर डिब्बी वह राधा को दे देगी, इस बात का विश्वास राधा को हो ही नहीं रहा था। पुष्पा उस डिब्बी को किसी को हाथ भी नहीं लगाने देती थी कि उसमें निशान पड़ जाएँगे। उस डिब्बी को पुष्पा अपने कपड़ों के सबसे नीचे रखती थी। राधा अकसर पुष्पा के घर जाती थी पर इस डिब्बी को देखने का मौका उसे बहुत कम मिलता था और छूने का मौका तो उसे आज तक नहीं मिला था। इस बातचीत में पुष्पा राधा को अपनी फूलों वाली अलबम शर्त में दाँव पर लगाने के लिए तैयार कर लेती है। स्कूल में दिन भर की कशमकश के बाद ये शर्त तय होती है। इस तरह विभिन्न घटनाएँ कहानी को आगे बढ़ाती हैं। यह एक ऐसी कहानी है

बाहर पुरानी बस के बगल में खड़ा रहता था। लोहे के ऊँचे फाटक को स्कूल का मेहराबदार हमेशा कसकर बन्द रखता था। फाटक में एक लम्बी-सी खिड़की थी। सुबह के समय इसी खिड़की के रास्ते लड़कियाँ भीतर आती थीं। खिड़की में घुसने के लिए बड़ी बहनजी को भी पैर सम्भालकर अन्दर रखना होता था क्योंकि खिड़की सड़क से आधे फुट की ऊँचाई से शुरू होती थी। आँगन में प्रार्थना शुरू होने के ठीक पहले तिजिया खिड़की के पास आती और ज़ोर-से धक्का देकर उसे बन्द कर देती। खिड़की के बन्द होने की आवाज़ का अर्थ होता है कि प्रार्थना शुरू होने वाली है। इसके बाद खिड़की को आधी छुट्टी की घण्टी बजाकर ही खोलती। तब तक प्रेम चाटवाला अपना ठेला बाहर लगा चुका होता। आधी छुट्टी में लड़कियाँ उसे घेर लेतीं और कुसुम मैडम भी उसी घेरे में धँसी होतीं'।

जिसे पढ़ते हुए बच्चे अपने अनुभवों को भी जोड़ पाते हैं।

स्मृतियों में ले जाता उपन्यास

किताब की सबसे बड़ी खासियत है कि इसे पढ़ते हुए पाठक का स्कूली जीवन से जुड़ाव सहज ही बन जाता है। किताब में बच्चों का सहज कौतूहल और उनकी आकांक्षाएँ जगह-जगह प्रतिबिम्बित होती हैं जिससे कहानी में रोचकता बनी रहती है और पढ़ने वाले की स्मृतियों को जगाए रखती है। किताब के विभिन्न विवरण जीवन्त बन पड़े हैं जिन्हें यहाँ प्रस्तुत उद्धरणों में देखा जा सकता है।

'प्रेम का ठेला स्कूल के फाटक के

अच्छे साहित्य में भाषा का महत्व

किताब की भाषा बहुत सहज है जो पढ़ने में प्रवाह बनाए रखती है। कहानी की घटनाओं को विस्तार में दिया गया है जिन्हें पढ़ने में मज़ा आता है। इससे यह भी पता चलता है कि अच्छे साहित्य में भाषा का क्या

महत्व है और भाषा किस तरह से विवरण और घटनाओं को आलोकित करती है। इसका एक उदाहरण देखते हैं।

‘बस का एक्सिल वर्षों से रुका पड़ा होने से जंग खा चुका था। उसे ज़िन्दा करने में पूरा एक दिन लग गया। फिर गियरों की बारी आई। गियरों का काम इंजन की ताकत को किफायती ढंग से इस्तेमाल होने देना है। गियर लोहे के दाँतदार चकों को कहते हैं। उनके दाँते एक-दूसरे में फँसकर चकों को घुमाते हैं। भगवानदास ने बस की गियर-प्लेट खोली तो देखा कि उसके अन्दर छिपकलियों का एक भरा-पूरा परिवार रह रहा है। बच्चे तो गियर-प्लेट खुलते ही भाग खड़े हुए, पर माँ को हटाने में काफी दिक्कत आई। गियरों के दाँते ठीक-ठाक थे पर कई सालों से खड़े रहने के कारण अपनी जगह जम गए थे। इसलिए हर एक चके को खोलकर साफ करना पड़ा। गियरों के बाद बारी आई क्लच-प्लेट की, जो गियरों को नुकसान पहुँचाने से बचाने का काम करती है। उसके बाद ब्रेक का नम्बर आया। ब्रेक एकदम बर्बाद हो चुके थे इसलिए नए लगाने पड़े’।

कहानी में उतार-चढ़ाव

किताब में रोचकता बनाए रखने के लिए जगह-जगह तनाव हैं जो पाठक को कहानी खुद आगे बढ़ाने के मौके देते हैं। पाठक मन ही मन सोचता रहता है कि आगे क्या होने वाला है। इन तनावों में हम एक पैटर्न भी देख सकते हैं। इससे हमें पाठ की कशमकश का एहसास होता है जैसे – पुष्पा और राधा में कौन जीतेगा, बस ठीक होगी कि नहीं, बस निवाड़ी पहुँचेगी कि नहीं, पूड़ियों की गठरी कैसे वापस आएगी आदि। कहानी का अन्त भी पाठकों पर ही छोड़ा गया है कि बस अपने गन्तव्य तक पहुँचेगी कि नहीं। कहानी के अन्त में राधा को उनकी शर्त याद आती है। वह पुष्पा से कहती है, “पुष्पा, अब तेरी डिब्बी मेरी हो गई।” उसकी आवाज़ से साफ ज़ाहिर था कि वह मज़ाक कर रही है लेकिन पुष्पा ने कहा, “अभी कहाँ? अभी निवाड़ी दूर है।”

किताब का शुरुआती तनाव है कि बस निवाड़ी पहुँचेगी कि नहीं। डर इस बात का है कि दो सौ मील लम्बे रास्ते में दुर्घटना न हो जाए। बस खटारा है। स्कूल की पुरानी चपरासिन तिजिया बताती है कि यह बस आखिरी बार बीस साल पहले चली थी। तभी से वह स्कूल के फाटक के पास खड़ी है। इस बस पर चढ़कर कोई कहीं जाने की सोचता तो वह उसका पागलपन ही माना जाता है। इस बस के जीवन्त वर्णन को पढ़ा जा सकता है:

‘उसे बस की शक्ल याद आई – वर्षों से खड़े हुए, ज़मीन में धँसते हुए टायर, जंग खाते हुए पहिए, खिड़कियों के टूटे हुए काँच और सबसे बड़ी बात – इंजन से झाँकते हुए सैकड़ों पुराने

तार। ऐसी बस भला कैसे चल सकती है? और चल भी जाए तो सड़क पर चलने वाली दूसरी बसों से कैसे बचेगी? बसों से बच गई तो ट्रकों से...?'

इस बस की धीरे-धीरे मरम्मत कैसे होती है? इसके वर्णन को भी देखें:

'सबसे पहले उन्होंने बस की सफाई की। सींकवाले दो झाड़ू लेकर उन्होंने बस में जगह-जगह जमी धूल-मिट्टी हटाई। सीटों के नीचे, इंजन के भीतर मोटी-मोटी मकड़ियाँ विशाल जाले बनाकर वर्षों से रह रही थीं, उन्हें विदा करके सरजू इंजन खोलने में जुट गया और भगवानदास एक्सिल की जाँच के लिए बस के नीचे घुस गया'।

कहानी में आपसी रिश्ते

बस चल दे और उसमें बड़ी बहनजी न दिखाई पड़ें, यह बात लड़कियों के गले नहीं उतरती क्योंकि उन्होंने बस की मरम्मत करवाकर प्रतियोगिता में जाने की पूरी योजना बनाई है। उन्होंने स्कूल में बस को ठीक करवाने के बाद एक सहज वातावरण बना दिया है। सभी बड़ी बहनजी को ढूँढ़ते हैं। इसका वर्णन देखें:

'बस चले हुए पन्द्रह मिनट हो गए, तब अचानक पुष्पा के मन में यह

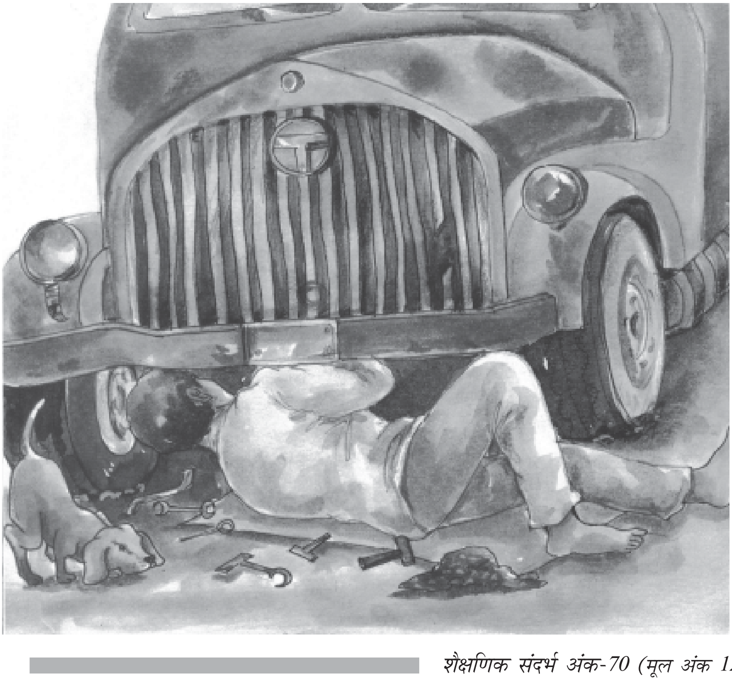

प्रश्न उठा कि बड़ी बहनजी क्यों नहीं दिख रही हैं। उसने बगल में बैठी राधा से पूछा तो वह भी थोड़ा हैरत में पड़ गई। दोनों ने पीछे की सीटों पर नज़र डाली, पर बड़ी बहनजी कहीं नहीं थीं। अभी-अभी बस के रवाना होने तक वह बस में खड़ी थीं, यकायक गायब कैसे हो गईं? उन्हें जाना नहीं था तो सुबह-सुबह आई ही क्यों? इन जिज्ञासाओं से घिरकर पुष्पा अपनी सीट से उठी और ड्राइवर की सीट के ठीक पीछे खिड़की के पास बैठे प्रमोद सर के पास जाकर बोली, "सर, बड़ी बहनजी हमारे साथ क्यों नहीं आईं?" प्रमोद सर खिड़की से बाहर देख रहे थे। सिर घुमाकर पुष्पा की तरफ देखते हुए बोले, "पूड़ियाँ बनवा रही हैं।" '

इस घटना से हम इस सोच में पड़ सकते हैं कि एक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय की प्राचार्या बच्चों व अपने साथ के शिक्षकों के लिए पूड़ियाँ बनवाएँ, क्या आज यह सम्भव है? इसी तरह ज़िले के कलेक्टर की बेटी भी एक आम बच्चों के स्कूल में पढ़े, यह आज के दौर में देखने को नहीं मिलता। इस प्रकार यह कहानी हमें आज से लगभग चालीस-पचास साल पहले विद्यालय के सहज वातावरण का अनुभव कराती है। इससे समझ में आता है कि उस समय विद्यालय का बच्चों एवं समुदाय से सहज लगाव था। विद्यालय के शिक्षक, बच्चों और स्टाफ के बीच सहज व जीवन्त माहौल को देखकर हम सोच में पड़ जाते हैं कि आज हमें

एक बदला हुआ माहौल क्यों दिखाई देता है। इस भागते हुए जीवन में हम किन चीज़ों को खो बैठे हैं? हमारे आपसी रिश्तों की गर्माहट क्यों ठण्डी पड़ गई है?

कहानी के अन्त का मुख्य तनाव यह है कि बहनजी व तिजिया तो बच्चों की बस में आ जाती हैं परन्तु उनकी पूड़ियों की गठरी जल्दी में रोडवेज़ की बस में ही छूट जाती है। उसकी याद उन्हें तब आती है जब कुसुम मैडम ने उनसे पूछा, "लड़कियों ने सुबह से कुछ नहीं खाया है। खाने के लिए कहाँ रुकना है?" यह सुनकर बड़ी बहनजी को ज़बरदस्त झटका लगता है। पूड़ियों की गठरी लड़कियों को कैसे मिलती है? इसमें मरम्मत हुई खटारा बस और उसका ड्राइवर भगवानदास किस प्रकार की भूमिका निभाते हैं? – यह सब जानने के लिए इस किताब को पढ़ना ही पड़ेगा।

पात्रों पर एक नज़र

उपन्यास के पात्रों पर नज़र डालें तो उनमें विविध छवियाँ नज़र आती हैं। स्कूल की बड़ी बहनजी जो इसी वर्ष प्राचार्या बनकर विद्यालय में आई हैं, वे सबके साथ एक सहज रिश्ता बना लेती हैं और स्कूल का माहौल बदल देती हैं। बहुत-से कार्यों में खुद पहल करती हैं और विद्यालय को एक कुशल नेतृत्व प्रदान करती हैं। इसके उदाहरण जगह-जगह किताब में मिल जाते हैं। राधा और पुष्पा स्कूल की छात्राएँ हैं, दोनों का अलग-अलग व्यक्तित्व है और वे जीवन की विभिन्न घटनाओं को अलग-अलग तरह से देखती हैं। कुसुम मैडम हैं जो खेल की शिक्षिका हैं। वह लड़कियों के साथ घुल-मिलकर रहती हैं और उन्होंने ग्वालियर के मशहूर खेल व शारीरिक संस्थान से प्रशिक्षण पाया हुआ है। उस पर उन्हें गर्व है। उनका नीला कोट सारे शहर में मशहूर है। इस कोट पर उनके संस्थान का नाम कढ़ा हुआ है। उनके बाल कटे हुए हैं। इस कारण उन्हें लोग मैडम कहते हैं। प्रमोद सर हैं जो स्कूल में संगीत के शिक्षक हैं। उन्हें सब 'हारमोनियम मास्साब' कहते हैं। वे अपनी ही उधेड़-बुन में खोए रहते हैं। सरजू चौकीदार है, वह हाशिए का पात्र है पर बस को ठीक करने में उसकी प्रमुख भूमिका है। उसने गाड़ियों को ठीक करने का काम सीखा हुआ है लेकिन वह विद्यालय में चौकीदार बन गया है। वह बड़े उत्साह से विद्यालय की बस ठीक करने की ज़िम्मेदारी उठा लेता है। उसके लिए प्राचार्या को आवेदन लिखता है। बड़ी बहनजी के सामने बीड़ी पीने से डरता है। भगवानदास ड्राइवर है जो कलेक्टर की कार चलाता है। उनकी बेटी को स्कूल छोड़ने-लेने आता है। उसकी भी स्कूल की बस को ठीक करने व बस से बच्चों को ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका है। ये सभी पात्र सशक्त ढंग से उभरते हैं।

लेखन-शैली की पकड़

चूँकि किताब बच्चों को ध्यान में

रखकर लिखी गई है, इस कारण इसका शीर्षक *पूड़ियों की गठरी* भी रहस्य-रोमांच से पढ़ने की उत्कण्ठा बनाए रखता है कि पूड़ियों की गठरी बच्चों को कैसे वापस मिलेगी, खटारा बस कैसे रोडवेज़ की बस को पकड़ेगी। इसमें ड्राइवर भगवानदास के बस चलाने का वर्णन अत्यन्त रोचक है। इसी के साथ राधा व पुष्पा के द्वन्द्व अन्त तक बने रहते हैं और पढ़ने वाले को बाँधे रखते हैं।

इस किताब को पढ़ते हुए साहित्य और बाल-साहित्य की दूरियाँ सिमट जाती हैं। हमें पता ही नहीं चलता कि हम बच्चों की किताब पढ़ रहे हैं या बड़ों की। दरअसल, हम एक अच्छी रचना का आस्वाद ले रहे होते हैं जो साहित्य और बाल-साहित्य के भेद को मिटा देती है। इसको पढ़ते हुए हमें कई और रचनाएँ याद आ जाती हैं जो बच्चों की भी हैं और बड़ों की भी, जैसे - गुलिवर ट्रेवल्स, लिटिल प्रिंस, एलिस इन वंडरलैंड आदि।

किताब को पढ़ते हुए लगता है कि काश इस तरह की और रचनाएँ पढ़ने को मिलती रहें। इसके कई हिस्सों को दोबारा पढ़ने का मन करता है। ऐसा कम किताबों के साथ ही होता है लेकिन यह छोटी-सी किताब ऐसा रिश्ता बना लेती है।

ऐसा महसूस होता है कि इसके कुछ हिस्सों का रसास्वादन बच्चों के साथ बैठकर करना चाहिए और मिडिल कक्षाओं के बच्चों को इसे पढ़कर सुनाना चाहिए। हम जानते ही हैं कि पाठ्यपुस्तक की रचनाओं को परीक्षा की दृष्टि से ही पढ़ाया जाता है जिससे बच्चों में पढ़ने की रुचि नहीं बन पाती। लेकिन इस तरह की कृतियाँ बच्चों में पढ़ने के प्रति रुचि बनाने में मदद कर सकती हैं। इसमें शिक्षकों की भागीदारी की भी ज़रूरत होगी। इस कहानी के साथ बच्चे अपनी पाठ्यपुस्तक में शामिल हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचना *बस की यात्रा* भी पढ़ सकते हैं। उसमें एक अलग भाषा का आस्वाद मिलेगा। इसे पढ़ते हुए छोटे बच्चों की पुस्तक *बस की सैर* की भी अनायास याद आ जाती है। किताब के आखिर में लगता है कि अभी कहानी बाकी है क्योंकि बस निवाड़ी नहीं पहुँची है।

इस किताब को पढ़कर यह महसूस होता है कि यह किताब शायद लेखक के बचपन की गहरी स्मृतियों पर आधारित है। इस किताब के लेखक हैं मशहूर शिक्षाविद् व साहित्यकार - कृष्ण कुमार। वे शिक्षा के मुद्दों के अलावा बच्चों व बड़ों का साहित्य भी लिखते रहे हैं। चित्रकार हैं - सीमा जबीं हुसैन। इसके प्रकाशक हैं *नेशनल बुक ट्रस्ट*, नई दिल्ली। यह कहानी की ताकत ही कही जाएगी कि पहले यह किताब के रूप में प्रकाशित हुई, बाद में *चकमक* पत्रिका में धारावाहिक के रूप में दोबारा आई जिसमें जगदीश जोशी के बनाए सुन्दर चित्र ध्यान खींच लेते हैं।

कमलेश चन्द्र जोशीः प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र से लम्बे समय से जुड़े हैं। इन दिनों अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, ऊधमसिंह नगर में कार्यरत।

सभी चित्र *पूड़ियों की गठरी* किताब से साभार।

प्रसिद्ध शिक्षाविद् कृष्ण कुमार द्वारा लिखी किताब *पूड़ियों की गठरी* नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित की गई है। इसका मूल्य 70 रुपए है।